International Journal of Sanskrit Research 2020; 6(3): 92-95

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2020; 6(3): 92-95
© 2020 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 28-07-2020
Accepted: 30-08-2020

डॉ० कुलदीप चन्द्र पन्त
विभाग-संस्कृति (शिक्षा विभाग)
पद-सहायक प्रवक्ता (साहित्य)
विश्वविद्यालय-उत्तराखंड संस्कृत
विश्वविद्यालय बहादराबाद हरिद्वार,
उत्तराखंड, भारत

Corresponding Author:
डॉ० कुलदीप चन्द्र पन्त
विभाग-संस्कृति (शिक्षा विभाग)
पद-सहायक प्रवक्ता (साहित्य)
विश्वविद्यालय-उत्तराखंड संस्कृत
विश्वविद्यालय बहादराबाद हरिद्वार,
उत्तराखंड, भारत

भारतीय दर्शन में श्रीद्मभागवत महापुराण का वैशिष्ट्य

डॉ० कुलदीप चन्द्र पन्त

प्रस्तावना

भारतीय दर्शन को अध्यात्म विद्या कहा जाता है जिसका मुख्य विषय आत्म दर्शन है जो सबसे कठिन माना जाता है। इसके रहस्य तक सच्चा साधक ही पहुंच सकता है और जो इसको समझ जाता है वही मोक्ष का मुख्य अधिकारी है तथा मोक्ष ही भारतीय दर्शन का मुख्य सिद्धान्त है। पुरुषार्थ चतुष्ट्य को जीवन का परम लक्ष्य कहा जाता है तथा इस पुरुषार्थ चतुष्ट्य में मोक्ष को आध्यात्मिक परंतत्त्व कहते हैं जो ब्रह्म-तत्त्व या आत्म तत्त्व भी कहलाता है, जिसको प्राप्त करने के लिए परमार्थिक या आध्यात्मिक ज्ञान की अपेक्षा होती है, जो विज्ञान या सांसारिक ज्ञान से सर्वथा भिन्न है। यह ज्ञान या विद्या कहलाता है जिसके द्वारा अविद्या, कर्म और उनके द्वारा उत्पन्न होने वाले सांसारिक बन्धनों का अन्त हो जाता है। दर्शन अथवा परमात्मा का साक्षात्कार करने के पश्चात् जीव के कर्म बन्धन हमेशा के लिए क्षीण हो जाते है और वह परमानन्द को प्राप्त करता है।

भिद्यते हृदय ग्रन्थि श्छिघन्ते सर्व संशायाः।।
क्षीयतें चास्यं कर्माणि दृष्ट एवात्मनीश्वरे। (श्री०म०भा०१/४/४३)

भारतीय आध्यात्मिक दर्शन का मूल आधार-

भारतीय आध्यात्मिक दर्शन का मूलाधार वेदोपनिषद और पुराणों को स्वीकार किया गया है। भारतीयजीवन में आध्यात्मिक प्रयोजन का स्थान सदा ही सर्वोपरि रहता है। भारतीय पौराणिक दर्शन की रूचि मानव समुदाय में है किसी काल्पनिक एकान्त में नहीं । इसका उद्भव जीवन में से होता है और विभिन्न शाखाओं और सम्प्रदायों में से होकर यह पुनः जीवन में ही प्रवेश करता है। वेदपुराण, गीता, और उपनिषद् जनसाधारण के धार्मिक विश्वास की पूंजी है । ये ग्रन्थ इस देश के महान साहित्य के अंग हैं और साथ ही बड़ी-बड़ी दार्शनिक विचार धाराओं के माध्यम भी हैं। पुराणों में कथाओं और कल्पनाओं के रूप में सत्य छिपा हुआ है जिससे जन समुदाय के बड़े वर्ग का भी उपकार हो सके। दर्शन के सत्य और जनसाधारण के दैनिक जीवन का घनिष्ठ सम्बन्ध ही धर्म को सदा सजीव और वास्तविक बनाता है । अतः यहां यह माना गया है कि धर्म और सत्य के प्रकाश में ही जीवन का संस्कार किया जाना चाहिए । यहाँ इसकी प्रगति के लिए धर्म एक युक्तियुक्त संश्लषण है जो दर्शन की प्रगति के साथ-साथ अपने अन्दर नये-नये विचारों का संग्रह करता रहता है सम्पूर्ण वेद एवं पुराणों के सारभूत श्रीमद् भागवत महापुराण में भी इसका प्रारम्भ भगवान वेदव्यास द्वारा "सत्यं परं धीमहि" परंसत्य के धारण से होता है । यही सत्य हमारा अस्तित्ववोधक और अन्त में विलय का वोधक है । धर्म और सत्य दोनों एक दूसरे के परिपूरक हैं । धर्म ही सत्य है और सत्य ही धर्म है । अतः यही परम धर्म भागवत् दर्शन है, और यही परं धर्म रूपदर्शन हमारे आध्यात्मिक कल्याण का मूलश्रोत है, सृष्टि में इसका सृजन (प्रारम्भ) वेद, पुराणोंपनिषदों के प्रणेता भगवान वेदव्यास जी के अद्भुत एवं चात्मकारिक चिन्तन से होता है। वेदोपनिषद पुराणादि नाना प्रकार की शाखाओं से होकर इसका कलेवर अपने विशाल स्वरूप को प्राप्त हुआ है।

दर्शन का अर्थ, विभाजन एवं षडदर्शन समुच्चय

'दर्शन' शब्द दर्शनार्थक दृश् धातु से बनता है जिसका अर्थ है देखना या अवलोकन करना।[३] अतः इसका व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ किया जाता है 'दृश्यते अनेन इति दर्शनम्'[१] अर्थात् जिसके द्वारा देखा जाय और क्या देखा जाय ?

साधारणतः हम आँखों से देखते हैं तथा रूपादि को देखते हैं। परन्तु आँखों से रूप का ज्ञान देखना है, दर्शन नहीं। अतः स्पष्ट है कि 'देखना' दर्शन का साधारण अर्थ है। दर्शनशास्त्र में दर्शन का एक विशेष अर्थ हैः तत्त्व के प्रकृत स्वरूप का अवलोकन। तत्त्व का यथार्थ स्वरूप साधारण-दृष्टि से गम्य नहीं। -''तद् इति सर्वनां सर्व च ब्रह्म तस्यनाम् तत् इति तदभावः तत्वं ब्रह्मणो यथात्म्यम्''[२] अर्थात् तत् सर्वनाम है और सर्व ब्रह्म है। अतः ब्रह्म का नाम 'तत्' है, उसके भाव को, अर्थात् ब्रह्मम के यथार्थ स्वरूप को तत्त्व कहते हैं। इसी तत्व का अर्थात् ब्रह्म के यथार्थ स्वरूप का सम्यक् ज्ञान ही दर्शन है। उदाहराणार्थ श्वेता उपनिषद में कहा गया है कि-

यदात्मतत्त्वेन तु ब्रह्मतत्वं
दीपोपमेनेह युक्तः प्रपश्येत्।
अजं ध्रुवं सर्वतत्वैर्विशुद्धं
ज्ञात्वा देवं मुच्यते सर्वपाशैः।।[३]

अर्थात्''जिस समय योगी दीपक के समान प्रकाश स्वरूप आत्मभाव से ब्रह्ममतत्त्व का साक्षात्कार करता है उस समय उस अजन्मा, निश्चल और समस्त तत्त्वों से विशुद्ध देव को जानकर वह सम्पूर्ण बन्धनों से मुक्त हो जाता है।, अस्तु तत्व ज्ञान अथवा आत्म साक्षत्कार ही दर्शन है।

भारतीय दर्शन के दो प्रमुख विभाग है : आस्तिक और नास्तिक। साधारणतः हम ईश्वरवादी को आस्तिक और अनीश्वरवादी को नास्तिक कहते हैं, अर्थात् ईश्वर की सत्ता में विश्वास रखने वाला ही आस्तिक है और जो इसके विपरीत ही वही नास्तिक है। परन्तु दार्शनिक दृष्टि से आस्तिक-नास्तिक का अर्थ दूसरा है। 'अस्ति नास्ति दिष्टं मतिः'[४] अर्थात् परलोक है, ऐसी मति (विचार) जिसकी है वह आस्तिक है और परलोक नहीं है, ऐसी मति जिसकी है वह नास्तिक है। इस प्रकार पुनर्जन्म आदि में विश्वास रखने वाला ही आस्तिक कहा गया है और इसके विपरीत नास्तिक। इसमें एक विसंगति यह है कि जैन और बौद्ध पुनर्जन्म में बिल्कुल विश्वास रखते हैं फिर भी वे नास्तिक कहे गये हैं। अतः पुनर्जन्म में विश्वास ही आस्तिक नास्तिक का निर्णायक नहीं कहा जा सकता। आस्तिक- नास्तिक की एक दूसरी परिभाषा महात्मा मनु ने दी है। जो प्रायः मान्य है। मनु के अनुसार वेद को प्रमाण मानने वाले आस्तिक हैं तथा वेद को प्रमाण न मानने वाले नास्तिक है :

योऽवमन्येत ते मूले हेतुशास्त्रनयाद् द्विजः ।
स साधुभिर्बहिः कार्यो नास्तिको वेदनिन्दकः ।।[५]

उक्त विवरण से स्पष्ट हुआ कि भारतीय दर्शन के मुख्य दो वर्ग हैं, आस्तिक और नास्तिक। इन दोनों वर्गों की संख्या कितनी है, इस प्रश्न पर बहुत विचार किया गया है। परन्तु सामान्यतः आस्तिक दर्शन छह माने गये हैं और नास्तिक दर्शन भी छह माने गये हैं। इन्हें षड्दर्शन कहते हैं। आस्तिक षड्दर्शन है : सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, कर्ममीमांसा और ब्रह्ममीमांसा (वेदान्त)। नास्तिक षड्दर्शन है : चार्वाक, जैन और बौद्ध। बौद्धदर्शन में चार सम्प्रदाय हैंः वैभाषिक, सौत्रांतिक, योगाचार और माध्यमिक। अतः मिलकर ये भी छह हो गये। अतः यह भारतीय षड्दर्शन समुच्चय भी कहा जाता है। यह विभाजन आस्तिक और नास्तिक रूप में वेद को (वैदिक प्रामाण्य को) अंगीकार करके किया गया है। अतः इसे वैदिक और अवैदिक की संज्ञा भी प्राप्त है।

भारतीय दर्शन की उत्पत्ति का हेतु आध्यात्मिक असंतोष

भारतीय दर्शन में जिस प्रकार उद्देश्यगत साम्य है उसी प्रकार विभिन्न दर्शनों की उत्पत्ति में भी प्रायः समानता दृष्टिगोचर होती है। भारतवर्ष में दर्शन की उत्पत्ति का कारण आध्यात्मिक असन्तोष माना गया है। चार्बाक को छोड़कर सभी भारतीय दार्शनिक संसार को असार, सांसारिक सुख को क्षणिक, अनित्य मानते हैं। ''दुःखमेव सर्वं विवेकिनः''[६] सारा जीवन दुख से पूर्ण है। कहीं सुख का लेशमात्र भी नहीं। दुःखों से मुक्ति पाना ही मानव का कर्त्तव्य है। भारतीय दर्शन के इस शोक, दुःखमय दृष्टि को देख कर कुछ पाश्चात्य विचारक भारतीय दर्शन को निराशावादी (Pessimism) कहते हैं। उनके अनुसार भारतीय दर्शन में जीवन का चित्र बिल्कुल विशादमय है। अतः वे भारतीय दर्शन पर नैराश्यवाद का आरोप लगाते हैं परन्तु यह आरोप उचित नहीं। निराशावाद भारतीय दर्शन का केवल प्रारम्भिक स्वरूप (Starting point) है, अन्तिम स्वरूप नहीं। भारतीय दार्शनिक जीवन को आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक दुःखों से परिपूर्ण मानकर ही दर्शन में प्रवृत्त होता है। परन्तु वह दुःख निवृत्ति का मार्ग भी खोज निकालता है। भारतीय दर्शन की यह विशेषता है कि इसका उद्भव आध्यात्मिक असंतोष से होता है, किन्तु उसका समापन आनन्दमय माना गया है। इसका आशय यह हुआ कि भारतीय दार्शनिक जीवन को आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक दुःखों से पूर्ण मानकर उसमें प्रवेश करता है और दुःख के निवृत्ति का मार्ग प्रशास्त कर चिरानन्द को प्राप्त करता है, यही हमारे दर्शन की विशेषता है। इसीलिए चार्वाक को छोड़कर सभी दार्शनिक संसार को असार तथा सांसारिक सुख को क्षणिक एवं अनित्य स्वीकार करते हैं। उनके अनुसार सारा जीवन दुःख से पूर्ण है तथा इस दुःख से मुक्ति पाकर स्वछन्द होना ही दर्शन की प्राप्ति है। श्रीमद्भागवत दर्शन की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। महर्षि वेद व्यास जी के द्वारा शुक-परीक्षित् संवाद के माध्यम से रहस्यमय कथा प्रसंगों के द्वारा दुःख के पर्याय जगत् का प्रतिपादन तथा उसके अधिष्ठानभूत सर्वोच्च आदि पुरुष 'परमात्मा' का प्रतिपादन किया गया। वेद, उपनिषद तथा पुराण आदि नानाप्रकार की शाखाओं के द्वारा इसका कलेवर अत्यधिक विशालता को प्राप्त हुआ है। इसी परंतत्त्व के बोध के लिए दर्शन की विभिन्न साखाओं का उदय, पुराणों का निर्माण, वेदोपनिषद एवं पुराणों के साररूप श्रीमद्भागवत का उद्भव हुआ है तथा इसी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सृष्टि का उपक्रम, सांख्य-योग, ज्ञान-कर्म एवं भक्ति, यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे, वर्ण-आश्रम एवं संस्कार, धर्मार्थकाममोक्षरूपी पुरुषार्थ चतुष्ट्य, आदि सम्पूर्ण वर्णन एवं प्रतिपादन भगवान् की सार्वभौमिकता का ही प्रतीक है, जो भागवत का परम लक्ष्य एवं दर्शन का चर्मोत्कर्ष है।

श्रीमद्भागवत का दार्शनिक पक्ष

संस्कृत वाङ्मय में आदि काल से निरन्तर प्रवाहित हो रही वेद, उपनिषद और पुराण साहित्य रूपी त्रिवेणी में ''पुराणों'' को अग्रता एवं श्रेष्ठता प्राप्त है। कुछ पुराण वेदों के उपवृंहण के साधन रूप में अवस्थित है। अष्टादश पुराणों के पुंज में श्रीमद्भागवत को ''महापुराण'' का विशेषण प्राप्त हैं। इसमें सम्पूर्ण विद्याओं का समावेश दृष्टिगोचर होता हैं। भागवत के एक-एक प्रकरण के अध्ययन, मनन एवं श्रवण तथा भजन से परमात्मा के प्रति अनुराग की प्राप्ति और संसार के प्रति वैराग्य की जाग्रति एवं ब्रह्मानुभूति की अवस्था स्वतः प्राप्त हो जाती है। भारतीय दार्शनिक मानते हैं कि ईश्वर आनन्द का पर्याय है और जगत् दुःख का, अतः भागवत के दर्शन पक्ष में संसाररूपी शोक सागर से मुक्त होकर आनन्द रूप परमात्मा में जीवात्मा का विलय प्रतिपादित किया गया है। महर्षि वेद

व्यास जी के द्वारा ईश्वर एवं मोक्ष के मध्य जीव और जगत् को लेकर प्रत्येक विषय को दार्शनिक दृष्टि से उद्घाटित किया गया। अस्तु भारतीय जीवन में आध्यात्मिक प्रयोजन का स्थान सर्वदा श्रेष्ठ माना गया है। मानव समुदाय में ही भारतीय पौराणिक दर्शन की रुचि है। यहां माना गया है कि इसका प्रारम्भ जीवन से होकर विभिन्न साखाओं के द्वारा पुनः इसका प्रवेश जीवन में ही हो जाता है। पुराणों में कथाओं और कल्पनाओं के रूप में सत्य ही अर्न्तनिहित है।

यह ग्रन्थ समस्त विद्याओं का आधार स्तम्भ है। श्रीमद्भागवत दार्शनिकों के लिए चिन्तन सागर, भारतीय संस्कृति के लिए उत्सव सागर, रसिक प्रेमियों के लिए लीला सागर, कथा प्रेमियों के लिए क्रीड़ा सागर, धार्मिकों के लिए धर्म सिन्धु, साहित्यकारों के लिए रस सिन्धु, इतिहासकारों के लिए मूलतथ्य के अन्वेषण का साधन, भूविश्लेषकों के लिए कौतुहल का माध्यम, विज्ञानियों के लिए परीक्षा की कसौटी, जिज्ञासुओं की मनोवृत्तियों के गुप्त से गुप्त रहस्यों को प्रकट करने वाला अध्यात्मदीप एवं समाधान का सिन्धु, शोकातुर के लिए शान्ति का अवसान सिन्धु तथा शुद्धान्तःकरण पुरूषों के लिए कर्म कल्याणकारी तत्त्ववस्तु का निरूपक एवं साधन है। यह सम्पूर्ण ज्ञान की रश्मियों को विखेरने वाला ज्ञानप्रदीप पुराणार्क है।

कृष्णः स्वधामानुगते धर्म ज्ञानादिभिः सह।
कलौनष्ट दृशामेष पुरणार्काधुनोदितः।। (श्री०भा०म०पु० १/४/४३)

श्रीमद्भागवत महापुराण अनेक लक्ष्यों का आधारभूत एवं अतिगहन और दुरधिगम तथा गौरवशाली ग्रन्थ शिरोमणि है। इसीलिए कहा गया हैं कि ''विद्यावतां भागवते परीक्षा'' यह भारतीय संस्कृति का उन्नत मस्तक है। ग्रन्थ की समाधि भाषा अत्यधिक रहस्यमयी है। यह वैष्णवों का धन एवं परमहंसों के ज्ञान का निधान है। जिस प्रकार भोजन करते समय प्रत्येक ग्रास के साथ-साथ तुष्टि, पुष्टि की प्राप्ति एवं क्षुधा के निवृत्ति स्वतः हो जाती है उसी प्रकार से भागवत के एक-एक प्रकरण के अध्ययन, मनन एवं भजन से जगत् पिता के प्रति अनुराग और संसार के प्रति विराग तथा ब्रह्मानुभूति की अवस्था की प्राप्ति होती है। जगत् दुःख और ईश्वर आनन्द का पर्याय है, यही हमारे दार्शनिकों की मान्यता है। अस्तु भागवत का दार्शनिक पक्ष गाम्भीर्यता से परिपूर्ण एवं शोकार्णव से उठकर परमात्मा में विलय का प्रतिपादक है। वेदान्त के सूत्र ''ब्रह्म सत्यम् जगत् मिथ्या'' को पुष्ट करते हुए भागवत में कहा गया है कि उत्तमश्लोकचरित् ही रमणीय, नित्यनूतन, सम्पूर्ण दुःखों का विघातक एवं ब्रह्मप्राप्ति का मूल साधन है।[१] इसीलिए भागवत महापुराण का एक नाम ''उत्तमश्लोकचरितम्'' भी विद्वानों द्वारा किया गया है। जो कि मुख्यतया ब्रह्म का प्रतिपादक है।

तदेव रम्यं रुचिरं नवं नवं
तदेव शश्वन्यसो महोत्सवम्
तदेव शोकार्णव शोषणं नृणां
यदुत्तमश्लोक यशोनुगीयते। (श्री०भा०म०पु० १२/१२/४६)[७]
इदंभागवतं नाम पुराणं ब्रहासम्मितम्
उत्तमश्लोक चरितं चकार भगवान ऋषिः
(श्री०भा०म०पु० १/२/०४)

अष्टादश पुराणर्क श्रीमद्भागवत महापुराण दर्शन की दृष्टि से गम्भीर एवं महत्वपूर्ण है। महर्षि वेदव्यास जी के द्वारा परीक्षित् शुक संवाद के माध्यम से जिज्ञासु राजा परीक्षित् के प्रति शंका समाधान युक्त रहस्यमय कथा प्रसंगों एवं उन प्रसंगवाचकों के (माध्यम के) ब्याज से दुःख के पर्याय जगत् का प्रतिपादन तथा उसके अधिष्ठानभूत सर्वोच्च आदिपुरूष (जो कि भावगम्य अतएव अर्निवचनीय है) का प्रतिपादन किया गया है। ईश्वर एवं मोक्ष के मध्य जीव और जगत् को लेकर कोई ऐसा विषय प्रतीत नहीं होता है जिसका कि श्रीमद्भागवत के दार्शनिक परिप्रेक्ष्य में विवेचन न हुआ हो। अस्तु दर्शन शास्त्र के अनुसंधानरत अन्वेषकों के लिए श्रीमद्भागवत की दार्शनिक पृष्ठभूमि (दार्शनिक परिप्रेक्ष्य) कौतुहल एवं जिज्ञासा का विषय है। इस महार्णव को आलोडित कर प्रश्नोत्तर अन्वेषण करने की नितांत अपेक्षा है। (आवश्यकता है)। द्वादशस्कन्धात्मक श्रीमद्भागवत तीन सौ पैतीस अध्याय एवं अट्ठारह हजार श्लोकों से परिपूरित कल्प वृक्ष है, तथा भगवान् श्रीकृष्ण का साक्षात् शब्दात्मक विग्रह है।

श्रीमद भागवताभिधः सुरतरूस्तारादड्कुरा सजनि
स्कधै द्वदिशाभिस्तंतः प्रविलसद् भक्त्याल वालोदयः
द्वात्रिंशत् त्रिशतं च यस्य विलसद शाखा सहस्राण्यलं
पर्णान्यष्ट दशोष्ट दोऽति सुलभो वर्तेत सवोपारि।
(श्रीधरी)

अध्यात्म शाखा के महान मनीषियों के द्वारा इस ग्रन्थ राज पर लिखी गयी संस्कृत टीकाएँ अत्यन्त प्रौढ़ एवं प्रामाणिक है। इनके द्वारा मुमुक्षुओं, संतों एवं भक्तों का जितना हृदयावर्जन होता है वहीं इसके पाठकों को अध्ययन से रसानुभूति के साथ-साथ मूलानुगामिनी होने के कारण दार्शनिक सिद्धान्तों का तत्तदैव सम्प्रदाय के अनुसार उनका प्रतिपादन भी किया गया है।

अतः स्पष्ट होता है कि भारतीय दर्शन का उद्भव जीवन से होकर विभिन्न साखाओं के माध्यम से इसका प्रवेश पुनः जीवन में ही होता है। धर्म को सजीव रखने के लिए दर्शन के सत्य को समझना परं आवश्यक है। अस्तु यहां स्वीकार किया गया कि धर्म और सत्य के प्रकाश से ही जीवन का संस्कार अपेक्षित है और सम्पूर्ण वेद पुराणों के सार भूत श्रीमद्भागवत महापुराण में भी महर्षि वेद व्यास जी के द्वारा इसका प्रारम्भ एवं समापन भी 'सत्यं परं धीमहि'[८] से किया गया। धर्म और सत्य दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। धर्म ही सत्य है और सत्य ही धर्म है, और यही परंधर्म भागवत दर्शन है, जो श्रीमद्भागवत महापुराण का परम् लक्ष्य है।

योऽस्योत्प्रेक्षक आदि मध्यनिधने योऽव्यक्तजीवेश्वरे,
यं सृष्टवेद मनु प्रविश्य ऋषिणा चक्रे पुरः शास्ति ताः।
यं संपद्य जहा त्यजा मनुशेयो सुप्तः कुलायं यथा,
तं कैवल्य निरस्त योनिमभयं ध्यायेदजस्रं हरिम्।।
(श्री०भा०द्वदस्कन्ध)
सत्यम् शिवम् सून्दरम्

सन्दर्भ सूची

1. 'दृशिर् प्रेक्षणे' अर्थात् दर्शनात्मकदृश धातु के आगेकरणअर्थमेंल्युट् प्रत्यय के योग से दर्शनबनताहै।- डा० बी०एन० सिंह-भारतीय दर्शनपृष्ठ सं०- ०१
2. शंकराचार्य-गीताभाष्य- २/१६
3. श्वेताउपनिषद- २/१५
4. ईशावास्योपनिषद्-मंत्र- ११
5. सम्यक्दर्शनसम्पन्नः कर्मभिर्ननिबध्यते।
दर्शनेनविहीनवस्तुसंसारंप्रतिपद्यते।। (मनुस्मृति) ६/७३
6. भारतीय दर्शन डा० बी०एन० सिंह पृष्ठ- ३
7. तदेवरम्यं रूचिरंनवंनवं, तदेव शश्वन्मनसोमहोत्सवम्।

तदेव शोकार्णव शोषणं नृणां, यदुत्तमश्लोक यशोऽनुगीयते।।
श्रीमद्भागवत् १२/१२/४६

8. श्रीमद्भागवत- १/१/१ काअन्तिमपाद ।